बँगला जासूसी रहस्यकथा 'मिस्मीदिर कवच' का हिन्दी अनुवाद

मिस्री लोगों का कवच

बिभूतिभूषण बन्द्योपाध्याय

अनुवादक
जयदीप शेखर

Cover photo credit: Image of lynx mascot logo by logturnal on Freepik

मिश्मी लोगों का कवच

बँगला जासूसी रहस्यकथा 'मिस्मीदेर कवच' का हिन्दी अनुवाद

लेखक
बिभूतिभूषण बन्द्योपध्याय

अनुवादक
जयदीप शेखर

PREVIEW COPY

जगप्रभा

Cover Photo Credit:
flat sparkling stars collection_15783264: Image by freepik.com
lynx simple mascot logo design: Image by logturnal on Freepik
Graphics: Translator

Copyright © 2024: Translator

-: Hindi eBook :-

MISHMI LOGON KA KAWACH

(The Shield of the Mishmi People (Tribals))

Hindi translation of the Bengali detective story 'Mismider Kawach'

Original Author: Bibhutibhushan Bandyopadhyay (1894-1950)
Hindi Translator: Jaydeep Shekhar
Published by:
JagPrabha
Barharwa (SBG), JH- 816101
jagprabha.in | jagprabha.bhw@gmail.com
Price: ₹ 65.00

***

बिभूतिभूषण बन्द्योपाध्याय

(1894-1950)

बिभूतिभूषण बन्द्योपध्याय की गिनती बँगला साहित्य के महान लेखकों में होती है। बँगाल के ग्राम्य-जीवन से पात्रों को लेकर उन्होंने बहुत सारे सामाजिक उपन्यासों की रचना की है।

सामाजिक उपन्यासों के साथ-साथ उन्होंने साहसिक गाथाएं और पारलौकिक कहानियाँ भी लिखी हैं। सामाजिक उपन्यासों में 'पथेर पाँचाली' (रास्ते का गीत), साहसिक गाथाओं में 'चाँदेर पाहाड़' (चाँद का पहाड़) और पारलौकिक कहानियों में 'तारानाथ तांत्रिक' उनकी कालजयी रचनाएं हैं।

बहुत कम लोगों को पता होगा कि विभूतिभूषण ने बाल-किशोरों के लिए एक जासूसी कहानी भी लिखी है। यहाँ उसी जासूसी कहानी का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया जा रहा है।

***

मिश्मी लोगों का कवच.....6
श्यामपुर का हत्याकाण्ड.....6
सन्देह की सूई.....16
लकड़ी की रहस्यमयी चकती.....22
जाँच-पड़ताल.....28
एक और जासूस?.....35
जानलेवा हमला.....42
आसाम की टोकरी!.....47
पर्दाफाश.....50
कवच का इतिवृत्त.....54

मिश्मी लोगों का कवच

श्यामपुर का हत्याकाण्ड

श्यामपुर गाँव में उस दिन नन्दोत्सव था।

श्यामपुर के पड़ोस के गाँव में मेरा मामाघर था। चौधरी लोगों के इस उत्सव में मेरे मामाघर के सभी निमंत्रित थे, मैं भी साथ में गया वहाँ।

गाँव के गणमान्य लोगों ने एक शतरंजी बिछाकर बैठकखाने में अड्डा जमा रखा था। मेरे बड़े मामा बाहर रहते हैं, फिलहाल छुट्टी लेकर आये हुए थे, सबने उनकी अभ्यर्थना की।

"अरे आशुबाबू, सब कुशल-मंगल है तो? नमस्कार!"

"नमस्कार। बस सब ठीक-ठाक ही है, आप सभी अच्छे हैं न?"

"कहाँ अच्छे? हाल-बेहाल है सब। मलेरिया का समय है अभी, समझ ही रहे हैं।"

"आपके साथ यह कौन है?"

"मेरा भांजा, सुशील। आज ही आया है, इसलिए लेता आया।"

"अच्छा किया, अच्छा किया, लाना ही चाहिए। क्या करता है नौजवान?"

यहाँ मुझे मामाजी को आँखों से ईशारा करने का मौका नहीं मिला, इसलिए मैंने हौले से उनकी कनिष्ठा उँगली दबा दी।

मामाजी बोले, "एक दफ्तर में नौकरी करता है, कोलकाता में।"

"बहुत बढ़िया, बहुत बढ़िया। आओ नौजवान, बैठो यहाँ आकर।"

मामाजी की उँगली दबाने का कारण बता दूँ। मैं कोलकाता में प्रसिद्ध प्राइवेट डिटेक्टिव निवारण सोम के अधीन रहकर प्रशिक्षण ले रहा हूँ। इस बात को प्रचारित करने की मेरी इच्छा नहीं थी।

नन्दोत्सव तथा आनुषंगिक भोजनपर्व सम्पन्न हुआ। हम लोग विदा लेने की तैयारी में थे, ऐसे में गाँव के एक प्रौढ़ सज्जन मेरे मामाजी को बुलाकर बोले, "कल आप लोगों के तालाब में मछली पकड़ने जाने की इच्छा है। हो पायेगा?"

"क्यों नहीं! बेशक आईए। आप आईए गाँगुली महाशय और हमारे यहाँ ही दोपहर का खाना खाईए।"

"नहीं-नहीं, इसकी क्या जरूरत? आप अपने तालाब में मछली पकड़ने दे रहे हैं– यही बहुत है, इसमें फिर खाना खाकर आप लोगों को क्यों परेशान करने जाऊँ?"

"फिर तो मछली पकड़ने नहीं मिलेगा– कहे देता हूँ। मछली पकड़ने जा सकते हैं केवल उसी एक शर्त पर।"

गाँगुली महाशय हँसकर राजी हो गये।

***

अगले दिन सुबह के समय हरिश गाँगुली महाशय मामाघर आये। छोटे-से गाँव के तालाब में मछली पकड़ने के लिए वे छोटे-बड़े छह बनसी ले आये थे– दो में व्हील लगे हुए थे, बाकी बिना व्हील के थे। साथ में टीन में मैदे का चारा, केंचुआ, चींटियों के अण्डे, तम्बाकू पीने का सरंजाम और भी जाने क्या-क्या चीजें थीं।

मामाजी से हँसकर बोले, "आ गया बड़ाबाबू, आप लोगों को परेशान करने। एक आदमी से अगर कुछ खपच्चियाँ कटवा देते तो..... केंचुओं का चारा लगाना है।"

मामाजी ने पूछा, "अभी बैठिएगा, या दोपहर बाद?"

"नहीं, अभी बैठना नहीं हो पायेगा। मछलियों के चारा खाने में दो घण्टे का समय लग जाता है। तब तक खाना-पीना निपटा लिया जाय। खाने की व्यवस्था अगर जल्दी हो जाती, तो..... "

"हाँ-हाँ, सब हो गया है। मुझे भी पता था कि आप आते ही भोजन की जल्दी कीजिएगा। जो मछलियाँ पकड़ने का शौक पालते हैं, उनके लिए खाना-वाना कुछ नहीं होता– अच्छे-से जानता हूँ। घण्टे भर के अन्दर ही खाना लगवा दूँगा।"

यथासमय में हरीश गाँगुली खाने पर बैठे और अकेले प्रायः तीन लोगों के लिए पर्याप्त खाना उन्होंने उदरस्थ कर डाला।

मैं कोलकाता का आदमी, यह देख चकित रह गया।

मेरे मामाजी ने पूछा, "गाँगुली मोशाय, थोड़ी-सी और खीर?"

"वो..... थोड़ा-सा चल सकता है। यह सब ज्यादा नहीं खा पाता! अकेले हाथ जलाकर खाना पकाता हूँ। घर में कोई महिला तो है नहीं, बहू-माँ बाहर रहती हैं बेटे के पास। कौन यह सब खिलायेगा?"

"गाँगुली मोशाय क्या अकेले रहते हैं?"

"बिलकुल अकेले रहता हूँ। बेटा कोलकाता में नौकरी करता है और मेरा शहर में मन नहीं लगता। इसके अलावे नकदी लेन-देन का कुछ कारबार भी करता हूँ– लगभग तीन हजार रुपयों से कुछ ज्यादा का। प्रति रुपये दो आने का मासिक सूद है। अब आपसे क्या छुपाना? इसलिए घर छोड़ना नहीं हो पाता। लोग अक्सर रुपये देने-लेने आते रहते हैं।"

लगा कि गाँगुली महाशय ने ये बातें थोड़े गर्व के साथ बता रहे थे।

ग्रामीण जीवन का कुछ खास अनुभव न होने पर भी मुझे ये बातें थोड़ी अजीब लगीं। रुपये-पैसे की बातें इस तरह सरे-आम कहने से भला क्या लाभ! इसमें खतरा भी है– शिष्टाचार-सुरुचि की बात अगर छोड़ भी दी जाय, तो।

खैर, गाँगुली महाशय मुझे अच्छे लगे।

मछलियाँ पकड़ते समय उन्होंने मुझसे ढेर सारी बातें कीं।

.....वे बहुत सादगी से रहते हैं, कोई आडम्बर नहीं है, खान-पान के मामले में भी कोई ताम-झाम नहीं है..... इसी तरह की बहुत-सी बातें उन्होंने बतायीं।

मछलियाँ उन्होंने पकड़ीं बड़ी-बड़ी दो। छोटी मछलियाँ चार-पाँच। मेरे मामाजी को उन्होंने आधी मछलियाँ देनी चाहीं, मामाजी ने लेने से मना कर दिया। बोले, "क्यों गाँगुली मोशाय, तालाब में मछलियाँ पकड़ने आये हैं, तो उसका लगान दीजिएगा क्या?"

गाँगुली महाशय जीभ काटकर बोले, "अरे राम! इसलिए थोड़े कह रहा हूँ! दो तो कम-से-कम रख लीजिए।"

"नहीं गाँगुली मोशाय, माफ कीजिएगा, यह नहीं ले सकता। इस तरह लेने का नियम नहीं है हमारे यहाँ।"

कोई चारा न देख गाँगुली महाशय चले गये। मुझसे कहते गये, "तुम नौजवान एक दिन छुट्टी में मेरे यहाँ आओ। तुमसे बातचीत करके बहुत अच्छा लगा आज।"

कौन जानता था कि उनके घर मुझे कुछ ही दिनों के अन्दर जाना पड़ जायेगा; लेकिन बिलकुल अन्य कारण से, अन्य उद्देश्य से।

गाँगुली महाशय के साथ बतियाने के लिए नहीं!

***

गाँगुली महाशय के चले जाने के बाद मैंने मामाजी से कहा, "आपने मछली क्यों नहीं ली? उन्हें जरूर बुरा लगा होगा।"

मामा हँसकर बोले, "तुम नहीं जानते, लेने से ही बुरा मानते– वे बड़े कंजूस हैं।"

"वो तो उनकी बातचीत से मैं समझ गया।"

"कैसे समझ गये?"

"और कुछ नहीं, बेटा-बहू कोलकाता में रहते हैं, वे गाँव के घर में अकेले रहते हैं। एक नौकर या खाना पकाने वाली नहीं रखते, हाथ जलाकर इस उम्र में खाना पकाकर खाना उन्हें मंजूर है; जबकि हाथ में दो पैसे भी हैं।"

"और कुछ गौर किये?"

"बड़े बातूनी हैं। मुझे लगता है, थोड़ा बढ़ा-चढ़ाकर भी बोलते हैं।"

"सही पकड़े हो। मैंने मछलियाँ नहीं लीं, उसका एक कारण यह भी है कि मछलियाँ दे जाने पर इसकी चर्चा वे सभी जगह करते फिरते और तब लोग सोचते कि हम लोग कितने घटिया आदमी हैं–तालाब में मछलियाँ पकड़ने के एवज में हमने मछलियाँ ले लीं।"

"नहीं मामा, यह आपकी भूल है। लोग ऐसा भला क्यों सोचेंगे? ऐसा भी कोई सोचता है?"

"खैर, जो भी हो, कुल-मिलाकर मुझे वह पसन्द नहीं।"

"वे एक बड़ी गलती करते हैं मामाजी। रुपयों की बातें वे इस तरह क्यों करते-फिरते हैं?"

"वह उनका स्वभाव है। हर जगह यही करते हैं। जहाँ बैठेंगे, वहीं रुपयों की बातें। बहुत दिनों से ऐसा करते आ रहे हैं। दिखाना चाहते हैं कि उनके हाथों में दो पैसे हैं।"

"मुझे लगता है कि यह आदत ठीक नहीं– खासकर इन ग्रामीण इलाकों में। किसी दिन आप उन्हें जरा सावधान नहीं कर सकते?"

"कोई फायदा नहीं। तुम उन्हें नहीं जानते हो। बड़े जिद्दी हैं। बात तो नहीं ही सुनेंगे, उल्टे सोच बैठेंगे कि जरूर मेरा कोई मतलब है।"

मैं उस दिन कोलकाता लौट गया शाम की ट्रेन से। मेरे वरिष्ठ निवारणबाबू ने लिखा था कि मुझे बहुत जल्दी ही एक बार इलाहाबाद जाना पड़ेगा किसी विशेष जरूरी काम से। दफ्तर जाते ही जानकारी मिली कि वे किसी और जरूरी काम से दो दिनों के लिए पटना निकल गये हैं– मेरी इलाहाबाद-यात्रा का खर्च तथा एक चिट्ठी वे रख गये हैं अपनी मेज की दराज में।

मेरे पास उनकी दराज की चाबी रहती थी। दराज खोलकर चिट्ठी पढ़कर देखा, कोई खास जटिल काम नहीं था– इलाहाबाद गवर्नमेण्ट थम्ब-इम्प्रेशन ब्यूरो में जाना था, कुछ दागी बदमाशों के अँगूठे की छाप की तस्वीरें लेने।

मि. सोम उँगलियों के निशान के एक विशेषज्ञ व्यक्ति थे।

इलाहाबाद में काम निपटाने में मुझे लगा मात्र एक दिन, फिर भी मैं वहाँ आठ-दस दिन रह गया।

उस दिन सुबह अचानक मि. सोम का एक टेलीग्राम मिला। एक जरूरी काम से उसी दिन मुझे कोलकाता लौटने के लिए वे कह रहे थे– मैं इलाहाबाद में और देर न करूँ।

***

भोर में हावड़ा स्टेशन पर ट्रेन के रूकते ही देखा कि मि. सोम प्लेटफार्म पर ही खड़े थे। मुझे थोड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि वे इस तरह कभी आते नहीं थे।

मुझसे बोले, "सुशील, तुम आज ही मामाघर जाओ। तुम्हारे मामा ने कल दो अर्जेण्ट टेलीग्राम किये हैं तुम्हें वहाँ पहुँचने के लिए।"

मैं परेशान होकर बोला, "मामाघर में किसकी तबियत बिगड़ी होगी? सब ठीक तो हैं?"

"ऐसा कुछ नहीं लगता है। टेलीग्राम में किसी की बीमारी का जिक्र नहीं है।"

"कोई आया नहीं है वहाँ से?"

"मैंने तार कर दिया है कि तुम इलाहाबाद गये हो। आज ही तुम्हारे लौटने की तारीख है– यह भी बता दिया है।"

मैं डेरे पर न जाकर सीधे सियालदह स्टेशन चला आया, मामाघर जाने के लिए।

मि. सोम मेरे साथ आये सियालदह स्टेशन तक– बार-बार उन्होंने याद दिलाया कि कोई गम्भीर बात होने पर मैं उन्हें सूचित करना न भूलूँ। वे बड़े उद्विग्न थे।

मामाघर में कदम रखते ही बड़े मामा बोले, "आ गये सुशील? चलो, बहुत चिन्ता में था।"

"बात क्या है मामाजी? सभी अच्छे तो हैं?"

"यहाँ की कोई बात नहीं है। श्यामपुर वाले हरीश गाँगुली महाशय की हत्या हो गयी है। वहाँ अभी तुरन्त चलना है।"

मैं भीत-चकित होकर बोला, "गाँगुली महाशय! जो उस दिन मछलियाँ पकड़ने आये थे! हत्या हो गयी?"

"हाँ, चलो एक बार वहाँ। जल्दी से नहा-धोकर कुछ खा-पी लो, क्योंकि हो सकता है कि सारा दिन वहाँ बीते।"

***

दोपहर दो बजे हम श्यामपुर पहुँचे। छोटा गाँव। कभी यहाँ किसी की एक लुटिया तक चोरी नहीं हुई थी– वहाँ हत्या हो गयी थी, अतः गाँव वाले स्वाभाविक रूप से डर गये थे। गाँव के बीच में स्थित सार्वजनिक पूजा-मण्डप में इकट्ठे होकर सभी इसी बात पर चर्चा कर रहे थे।

मेरे मामाजी इस घटना के बाद यहाँ कई बार आ चुके थे– ऐसा सबकी बातचीत से समझ में आया। मेरे बारे में किसी ने पूछ-ताछ नहीं की, या मेरी तरफ किसी ने ध्यान नहीं दिया। किसी को भी पता नहीं था कि मैं प्राइवेट डिटेक्टिव मि. सोम का प्रशिक्षु छात्र हूँ– ऐसे पिछड़े गाँवों में किसी ने उनका तक नाम नहीं सुना होगा, तो मुझे भला कौन पहचानेगा?

मामाजी ने पूछा, "लाश ले गये?"

उन लोगों ने बताया, "आज सुबह ले गये। पुलिस आयी थी।"

मैंने उन लोगों से पूछा, "घटना कैसे घटी? आज हुआ शनिवार। कब उनकी हत्या हुई?"

गाँव वालों ने जो बताया, उससे पता चला कि यह बात कोई नहीं जानता। अलग-अलग व्यक्ति अलग-अलग तरह की बातें बताने लगे। पुलिस के सामने इसी तरह बातें करके इन लोगों ने मामले को पेचीदा बना दिया था।

मैंने मामा को दूर ले जाकर जानना चाहा, "आप क्या सोचकर मुझे यहाँ लेकर आये हैं?"

मामा बोले, "तुम सारी बातें सुन लो, फिर चलो, तुम्हें बताता हूँ। इस हत्या के मामले को तुम्हें सुलझाना है– तभी मैं समझूँगा कि मि. सोम के पास तुम्हें प्रशिक्षण के लिए भेजकर मैंने गलती नहीं की। यहाँ कोई नहीं जानता कि तुम क्या काम करते हो– यह तुम्हारे लिए एक सुविधा है।"

"सुविधा भी है और असुविधा भी।"

"क्यों?"

"बाहर के किसी फालतू आदमी को कोई विस्तार से कुछ बताना नहीं चाहेगा। गहमा-गहमी थमने के बाद किसी एक अच्छे व्यक्ति को चुनकर सारी घटनाएं सिलसिलेवार ढंग से जान लेनी होगी। गाँगुली महाशय का बेटा कहाँ है?"

"वह लाश के साथ तहसील गया है। वहाँ लाश की चीर-फाड़ करेंगे डॉक्टर, फिर दाह-संस्कार के बाद ही वह लौटेगा।"

"लाश देख लेने से अच्छा रहता, मगर वह हो नहीं पाया।"

"इसीलिए तो कह रहा हूँ, तुमने कैसा काम सीखा है– यह उसकी परीक्षा है। इसमें यदि तुम पास करो, तब समझूँगा कि तुम मि. सोम के योग्य छात्र हो। नहीं तो मैं तुम्हें वहाँ और नहीं रखूँगा– यह बात तुम ध्यान में रखो।"

इसके बाद मैं गाँगुली महाशय के घर गया।

जाकर देखा, जहाँ गाँगुली महाशय का घर था, उसके दो तरफ घना जंगल था। एक तरफ थोड़ी दूरी पर गाँव की एक कच्ची सड़क थी और एक तरफ एक मकान था।

मैंने गाँगुली महाशय के बेटे के बारे में पूछताछ करके जाना कि वे अभी तक महकुमा से नहीं लौटे थे; हालाँकि एक प्रौढ़ा से भेंट हुई– पता चला कि वे गाँगुली महाशय की रिश्तेदार हैं।

उनसे पूछा, "गाँगुली महाशय को अन्तिम बार कब देखा था आपने?"

"बुधवार को।"

"किस समय?"

"शाम के पाँच बजे।"

“क्या कर रहे थे वे?”

“वह हटिया का दिन था, हाट जाने से पहले वे मुझसे पैसे लेने आये थे।”

“कैसे पैसे?”

“सूद के पैसे। मैंने उनसे दो रुपये उधार लिये थे पिछले महीने।”

“आपके बाद और किसी ने देखा था उन्हें?”

गाँगुली महाशय के घर के पश्चिम में जो मकान था, उसकी तरफ ईशारा करके प्रौढ़ा बोलीं, “उस घर की राय बुआ ने मेरे बाद उनको देखा था।”

मैंने वृद्धा राय बुआ के घर जाकर उन्हें प्रणाम किया, मुझे आशीर्वाद देने के बाद वृद्धा एक पीढ़ा निकालकर ले आयीं, बोलीं, “बैठो बेटे।”

मैंने संक्षेप में अपना परिचय देकर कहा, “आप क्या अकेली रहती हैं इस घर में?”

“हाँ बेटा। मेरा तो कोई है नहीं– बेटी-जमाई हैं, वही लोग देखभाल करते हैं।”

“बेटी-जमाई यहीं रहते हैं?”

“यहाँ भी रहते हैं, उनका घर यहाँ से चार कोस दूर साधूहाटी गाँव में हैं, वहाँ भी रहते हैं।”

“गाँगुली महाशय को बुधवार के दिन आपने कब देखा था?”

“रात में जब वे हाट से लौटे, तब मैं बाहर चबूतरे पर बैठकर जाप कर रही थी। इसके बाद भले आँखों से उन्हें नहीं देखा, पर उनकी आवाज सुनी मैंने रात के दस बजे तक– इसके बाद जब मैं सोने गयी, तब तक वे अपने रसोईघर में ढिबरी जलाकर खाना पका रहे थे।”

“तब रात के कितने बज रहे होंगे?”

“यह बेटा, मैं कैसे जानूँ? हम गाँव के लोग हैं, घड़ी तो है नहीं घर में। हाँ, तब फरीदपुर वाली गाड़ी चली गयी थी। हम लोग आवाज सुनकर जान जाते हैं कि कब कौन-सी गाड़ी आयी-गयी।”

“अकेले रहते थे और देर रात तक खाना पका रहे थे– यह क्या बात हुई?”

“उस दिन मांस लाये थे हाट से, मांस पकने में समय लग रहा था।”

“आपने कैसे जाना?”

“बाद में जाना था। हाट में उनके साथ और जिन लोगों ने मांस खरीदा था, वे बता रहे थे। इसके अलावे, जब रसोईघर खोला गया– बाब्बा रे!”

कहकर वृद्धा ऐसे सिहर गयीं, जैसे मन में उन्होंने उस दृश्य की वीभत्सता फिर से देख ली हो। साथ में गाँगुली महाशय की रिश्तेदार जो प्रौढ़ा थीं, वे भी बोल उठीं, "ओ बाबा, उस रसोईघर की बात याद आने पर अब भी उबकाई आती है!"

मैंने उत्सुकता के साथ पूछा, "क्यों-क्यों? क्या था रसोईघर में?"

वृद्धा बोलीं, "थाली के चारों तरफ भात बिखरे हुए थे, मांस के चबाये हुए टुकड़े और हड्डियाँ बिखरी हुई थीं। कटोरी में उस वक्त भी मांस और झोल बचा हुआ था। फर्श पर धक्का-मुक्की के निशान थे। वे खाने बैठे थे और उनके खाना समाप्त होने से पहले ही जिन लोगों ने उनकी हत्या की, वे आ पहुँचे।"

प्रौढ़ा भी बोलीं, "हाँ, यह सबने देखा है। पुलिस भी आकर रसोईघर देख गयी है। सबका यही मानना था कि ब्राह्मण का खाना समाप्त होने से पहले ही हत्यारों ने उन पर हमला कर दिया था।"

"चलिए ठीक है, यह तो हुई बीते बुधवार रात की बात। उसी दिन हाट थी न?"

"हाँ बेटे, अगले दिन सुबह उठकर हम लोगों ने देखा कि उनके घर के दरवाजे पर बाहर से ताला लटक रहा था। शुरू में सबने यही सोचा कि वे किसी काम से निकले होंगे, लौटकर खाना-वाना पकायेंगे। लेकिन जब शाम हो गयी, वे नहीं लौटे, तब हम लोगों ने सोचा कि वे अपने बेटे के पास कोलकाता गये होंगे।"

"उसके बाद?"

"वृहस्पतिवार बीता, शुक्रवार भी बीत गया, शुक्रवार की शाम को बन्द घर के अन्दर से कैसी एक दुर्गन्ध आने लगी। फिर भी लोगों ने सोचा– भादों का महीना है, गाँगुली महाशय शायद पके हुए ताड़ लाकर घर में रख गये हैं, वही सड़कर ऐसी बदबू दे रहा है।"

"शनिवार को किस समय आप लोगों को पता चला कि उनकी हत्या हो गयी है?"

"शनिवार को मैंने जाकर गाँव के कुछ बड़े लोगों को सब बताया। कईयों को पता नहीं था कि गाँगुली महाशय को पिछले कुछ दिनों से गाँव में देखा नहीं गया है। तब सब आये। दुर्गन्ध तब बहुत तेज हो गयी थी। सड़े हुए ताड़-जैसी गन्ध नहीं थी यह!"

"क्या किया आप लोगों ने?"

"तब सबने खिड़की खोलने की बहुत कोशिश की, लेकिन सभी खिड़कियाँ अन्दर से बन्द थीं। दरवाजा तोड़ना ही तय हुआ। दूसरे के घर का दरवाजा तोड़कर घुसना ठीक नहीं है– बाद में यदि इस पर सवाल उठे? तब चौकीदार और दफादार को बुलाकर उनके सामने दरवाजा तोड़ा गया।"

"क्या देखने मिला?"

"देखा गया– घर के अन्दर वे मरे पड़े हुए थे! सिर पर भारी चीज से मारने का निशान था। फर्श खोदकर ढेर सारी मिट्टी निकाली हुई थी, घर के पेटी-बक्से सब टूटे हुए थे, कुछ के ताले खुले थे, सारी चीजें तहस-नहस की हुई थीं। .....इसके बाद उनके बेटे को टेलीग्राम किया गया।"

"इसके अलावे आप लोग कुछ नहीं जानते?"

"नहीं बेटे, और हम लोग कुछ नहीं जानते।"

गाँगुली महाशय की पड़ोसन उन वृद्धा से मैंने पूछा, "रात में किसी तरह की आवाज सुनी थी? गाँगुली महाशय के घर से?"

"कुछ नहीं। बहुत रात में जब सोने जा रही थी, तब उनके रसोईघर में रोशनी जलती हुई देखी थी। मैंने सोचा– आज क्या बात है कि गाँगुली महाशय अभी तक खाना ही पका रहे हैं!"

"क्यों, ऐसा क्यों सोचा आपने?"

"इतनी रात तक वे रसोईघर में नहीं रहते थे; जल्दी ही खाना खाकर सो जाया करते थे। खासकर उस दिन तो घोर अन्धेरी रात थी– अमावस्या, ऊपर से टिप-टिप पानी बरसना शुरू हो गया था शाम से ही।"

"तब तो आप नहीं जानती थीं कि वे हाट से मांस लेकर आये हैं?"

"नहीं, तब नहीं जानती थी। .....अच्छा बेटे, जब इतना पूछ ही रहे हो, तो मुझे एक बात याद आ रही है– "

"क्या-क्या, बताईए?"

"वे खाना खाने के बाद रोज रात में कुत्तों को बुलाकर जूठे पत्तल या बचा हुआ खाना दिया करते थे, हर रोज कुत्तों को बुलाने की उनकी आवाज सुनायी पड़ती थी। उस दिन मैंने नहीं सुनी।"

"शायद आप सो गयी हों?"